ज्योतिष शास्त्र : एक परिचय

लेखक: - डॉ0 नन्दन कुमार तिवारी
सहायक प्राध्यापक, ज्योतिष विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
हल्द्वानी, नैनीताल

प्रिय अध्येताओं! ज्योतिषशास्त्र हमारे ऋषियों की देन है। सर्वविद्यामूलक वेद के अंग होने के कारण इसे 'वेदांग' भी कहा जाता है। ज्योतिष विषय नहीं, अपितु शास्त्र है। भारतीय मूल की चतुर्दश विद्याओं में इसकी गणना की जाती है। ज्योतिष शास्त्र वेद का नेत्र रूपी अंग है। अत: षड्वेदांगों में इसकी प्रमुखता है। ऋग्वेद में ज्योतिष के बीज भरे पड़े हैं जिन्हें लेकर इस वेदांग को संपुष्ट किया गया। वेदों का आविर्भाव किस कालखण्ड में हुआ इसका सही उत्तर आज तक अप्राप्त है। यह सम्भव भी नहीं है। वेद ज्ञान की राशि हैं और ज्ञान ईश्वर की तरह सत्य और अनन्त है। वेद की ऋचायें ऋषि हृदय में अवतरित होती है, इसीलिए वेद को अपौरूषेय कहा गया है। जब से सृष्टि हुई तब से ज्ञान है, जब से ज्ञान है तब से वेद का अस्तित्व है, क्योंकि वेद शब्द का अर्थ ही है 'ज्ञान'। 'विद् ज्ञाने' धातु से निष्पन्न है वेद। अत: वैदिक ज्योतिष और उसके सभी उपांग वेदांग होने के कारण अतिप्राचीन काल से भारतवर्ष में ऋषिसत्ता के अंग बने रहे।

भारतवर्ष में ज्योतिषशास्त्र की प्रवृत्ति वेद एवं वेदांगकाल से देखी गयी है। यह सत्य है कि वेद की ऋचाओं और मनत्र भाग में ज्योतिष की उपस्थिति सम्पूर्ण विस्तृति को नहीं प्राप्त कर सकी है, परन्तु ब्राह्मण ग्रन्थों में तो जैसे अत्यन्त गहराई के साथ विचार हुआ है। देवपथ का विचार हो या स्वस्तिपथ का, नक्षत्रों के प्रकाश का विचार हो या पृथ्वी पर किसी अन्य लोक की किरणों के प्रभाव का उल्लेख हो ब्राह्मण ग्रन्थों में ज्योतिष वहाँ अवश्य विचारित है। मनुष्य की प्रवृत्ति के निर्माण में केवल पंचतत्व ही कारण नहीं है, अपितु उपांशु और उर्ध्वलोक के ग्रहों के प्रभाव भी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है। अत: ज्योतिष का विचार वेदांगकाल से पूर्व ब्राह्मणग्रन्थों में सुविस्तृत प्राप्त होता है। वैदिक मन्त्रों का मनन और यज्ञीय मीमांसा का मन्थन, प्रक्रिया का निदर्शन जहाँ भी होता है वहाँ ज्योतिष शास्त्र की आवश्यकता पड़ी है, वहाँ विचार अवश्य हुआ है। ब्राह्मण ग्रन्थों का अध्ययन कर आश्चर्य होता है कि इतना विकसित ज्योतिष शनै: शनै: अपना स्वरूप बदलकर अत्यन्त सामान्य स्तर पर कैसे उतर आया?

वेदों को सम्पूर्ण रूप से समझने के लिए, प्रक्रिया को स्पष्ट करने के लिए और समग्र वेदज्ञान को पृथक् पृथक् परम्परा और अनुशासन के माध्यम से सुसज्जित करने के लिए शास्त्रों की रचना हुई। ये शास्त्र छ: है। इन्हें ही 'वेदांग' भी कहा जाता है। शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरूक्त, छन्द एवं ज्योतिष। यहीं से ज्योतिष के साथ शास्त्र शब्द जुड़ता है और ज्योतिष शास्त्र धीरे-धीरे विपुलता को प्राप्त करता चला गया।

ज्योतिषशास्त्र का सम्बन्ध मनुष्य के जन्म – जन्मान्तरों से जुड़ा हुआ है। इसलिए ज्ञात – अज्ञात अवस्था में भी निरन्तर हमें ज्योतिषशास्त्र किसी न किसी रूप में प्रभावित करता रहता है। ज्योतिषशास्त्र का दूसरा नाम '**कालविधान शास्त्र**' है। क्योंकि काल का निरूपण भी ज्योतिषशास्त्र द्वारा ही होता है। काल के प्रभाव के सम्बन्ध में 'कालाधीनं जगत् सर्वम्' तथा 'काल: सृजति भुतानि काल: संहरते प्रजा:' ये सूक्तियाँ ही पर्याप्त हैं। मानव जीवन का तथा कर्म के अधीन होता है। जैसा कि आचार्य वराहमिहिर ने स्वग्रन्थ लघुजातक में लिखा है –

यदुपचितमन्यजन्मनि शुभाऽशुभं तस्य कर्मण: पंक्तिम्।
व्यञ्जयति शास्त्रमेतत् तमसि द्रव्याणि दीप इव।।

अर्थात् पूर्वजन्म के कर्मानुसार ही मनुष्य का जन्म, उसकी प्रवृत्तियाँ तथा उसके भाग्य का निर्माण होता हैं। भारतीय ज्ञान – विज्ञान की परम्परा में 'वेद' को सर्वविद्या का मूल कहा गया है। उसी वेद के चक्षुरूपी अंग को मनीषीयों द्वारा ज्योतिषशास्त्र की संज्ञा प्रदान की गयी है। आचार्य भास्कराचार्य ने स्वग्रन्थ सिद्धान्तशिरोमणि में ज्योतिष को परिभाषित करते हुए लिखा है कि -

वेदस्य निर्मलं चक्षु: ज्योतिषशास्त्रमकल्मषम्।
विनैतदखिलं श्रौतं स्मार्त्तं कर्मं न सिद्धयति।।

अर्थात् ज्योतिष वेद का निर्मल चक्षु है, जो अकल्मष (दोषरहित) है और इसके ज्ञानाभाव में समस्त वेदप्रतिपाद्य विषय यथा– श्रौत, स्मार्त्त यज्ञादि क्रिया की सिद्धि नहीं हो सकती। सर्वसाधारण को सृष्टि के अनेक चमत्कारों का सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त होकर उनकी जिज्ञासा पूरी हो सके, इस हेतु हमारे देश के अलौकिक बुद्धिमान, महान तपस्वी व त्रिकालदर्शी महर्षियों ने अपने तपोबल के आधार पर आम जनमानस के लाभार्थ जो अनेक शास्त्र निर्माण किये, उनमें ज्योतिषशास्त्र का स्थान सर्वश्रेष्ठ व प्रथम है क्योंकि सृष्टि के प्रत्येक वस्तु की उत्पत्ति, प्रगति व लयादि कालाधीन है और उस काल का सम्पूर्ण वर्णन तथा शुभाशुभ परिणाम आकाशस्थ ग्रहों के उदय, अस्त, युति, प्रतियुति, गति व स्थिति पर निर्भर है। इन्हीं ग्रहों की शुभाशुभ

स्थिति पर जगत के मानव प्राणी का सुख–दु:ख, हानि– लाभ, जीवन-मरण पूर्णरूप से अवलम्बित है। अत: ज्योतिषशास्त्र का ज्ञान मानव के लिये अधिक महत्वपूर्ण है।

ज्योतिषशास्त्र में मूलत: ग्रह, नक्षत्र, तारा, उल्का आदि के विषय में सांगोपांग अध्ययन किया जाता है। इस ब्रह्माण्ड में जो भी चराचर जीव हैं उनमें पंचमहाभूत, तीनों गुण (सत्व, रज, तम) सात प्रकार की धातुएँ आदि ग्रहनक्षत्रादि के प्रभाव से रहते है। इनमें से किसी में पार्थिवतत्व अधिक पाया जाता है तो किसी में जल, किसी में अग्नितत्व कहीं वायु का अंश अधिक होता है तो कहीं आकाश का भाग अधिक होता है। किसी जातक में सत्वगुणी ग्रहों के प्रभाव से रजोगुण अधिक होता है। किसी का शरीर मांसल होता है, किसी में अस्थि की प्रधानता होती है तो किसी का केशाधिक्य होता है। इन सभी परिस्थितियों का कारण ग्रहयोगबल है। जिस जातक का जैसा प्राक्तन कर्म रहता है वह उस तरह के ग्रहयोग में उत्पन्न होकर जीवन भर कर्मानुसार शुभाशुभ फल का भोग करता रहता है। इन विषयों से सम्बद्ध सिद्धान्तों का ऋषि- महर्षियों ने प्रवर्तन किया। इनकी परम्पराओं का कालक्रम में परवर्ती आचार्यों ने पोषण किया और विकास के क्रम में विषय की दृष्टि से ज्योतिष शास्त्र को तीन स्कन्धों सिद्धान्त, संहिता, होरा में विभाजित किया। आज भी इस शास्त्र के आचार्य एवं जिज्ञासु विद्वान इसके संवर्द्धन में सतत तत्पर

हैं।

ज्योतिष की परिभाषा व स्वरूप

ज्योतिषशास्त्र का क्षेत्र इतना विहंगम है कि उसे एक वाक्य में परिभाषित करना सरल नहीं, तथापि विद्वानों ने इसे अलग – अलग रूप में परिभाषित किया है। सामान्यतया आकाश में स्थित ग्रहपिण्डों एवं नक्षत्रपिण्डों की गति, स्थिति तथा उसके प्रभावादि का निरूपण जिस शास्त्र के अन्तर्गत किया जाता हैं, उसे 'ज्योतिष' कहते है अर्थात् जिस शास्त्र में सूर्यादि ग्रहों की गति, स्थिति सम्बन्धि समस्त नियम, एवं उसके भौतिक पदार्थो के उपर पड़ने वाला प्रभाव का वैज्ञानिक रीति से विश्लेषण किया जाता है, उसे 'ज्योतिषशास्त्र'कहते है। संक्षिप्त रूप में ज्योतिष को इस प्रकार से भी परिभाषित करते है - **'ग्रहगणितं ज्योतिषम्'।** अर्थात् ग्रहों का गणित जिस शास्त्र के अन्तर्गत किया जाता है उसे 'ज्योतिष' कहते है। इसी प्रसंग में 'ज्योतिष' एवं 'ज्यौतिष' दो शब्दों की उपलब्धि होती है। परन्तु समस्त प्राचीन ग्रन्थों में 'ज्योतिष' शब्द को देखकर विद्वानों ने इसी को व्यवहार में वर्णित किया है। 'ज्यौतिष' शब्द आधुनिक ज्योतिर्विदों की कल्पना है। व्याकरणदृष्ट्या दोनों ही सही है। 'द्यतेदीप्तौ' धातु से प्रकाश अर्थ में ज्योतिष शब्द की व्युत्पत्ति हुई है, जहाँ ''द्यतेऋषीनाद्यौश्च य:'' सूत्र से जकार होता है। वेद के साथ ही इस शास्त्र का आविर्भाव होने के कारण इसका वेदांग होना भी प्रामाणिक है। वेद में विश्व के समस्त विषयों व नियमों का उल्लेख है, इससे इतर

कोई भी विषय नहीं हैं। परन्तु सामान्यतया वेद के मुख्य प्रयोजन है – यज्ञसम्पादन क्रिया, और यह कार्य वेदवाक्यांश के आधार पर कालाधीन है। अर्थात् कालविशेष में की जाने वाली याज्ञिक क्रिया सफल होती है। कालनिर्धारण ज्योतिषशास्त्र के द्वारा ही सम्भव है, अन्य किसी शास्त्र के द्वारा नहीं। इसीलिए भास्कराचार्य जी का भी कथन है –

वेदास्तावद्यज्ञकर्मप्रवृत्ता: यज्ञा: प्रोक्तास्ते तु कालाश्रयेण।
शास्त्रादस्मात् कालबोधो यत: स्याद्वेदाङ्गत्वं ज्योतिषस्योक्तमस्मात्।।

इस आधार पर ज्योतिष की परिभाषा इस प्रकार भी करते हैं –

'वेदचक्षु: किलेदं स्मृतं ज्योतिषम्'।

अर्थात् निश्चयेन ज्योतिष वेद का चक्षु रूपी अंग है। वेद का अंग होने से यह 'वेदांग' है। यज्ञादि कर्मों के द्वारा भगवदोपासना वेद का परम लक्ष्य है। उपर्युक्त यज्ञादि कर्म काल पर आश्रित हैं और इस परम पवित्र कार्य के लिए काल का विधायक शास्त्र ज्योतिषशास्त्र है। अत: इसे वेदांग की संज्ञा दी गई है। व्याकरण, ज्योतिष, निरूक्त, कल्प, शिक्षा और छन्द ये छ: वेद के अंग कहे गये हैं। जिनमें ज्योतिषशास्त्र नेत्र रूप में प्रसिद्ध है। वर्तमान काल की घटनाओं को नेत्र से देखा जा सकता है किन्तु भूत और भविष्य का दर्शन तो केवल वेद के चक्षु रूप ज्योतिष शास्त्र द्वारा ही सम्भव है। ज्योतिषशास्त्र के मुख्य रूप से तीन स्कन्ध है -

1. सिद्धान्त 2. संहिता 3. होरा या फलित

स्पष्टार्थ चक्रम् -

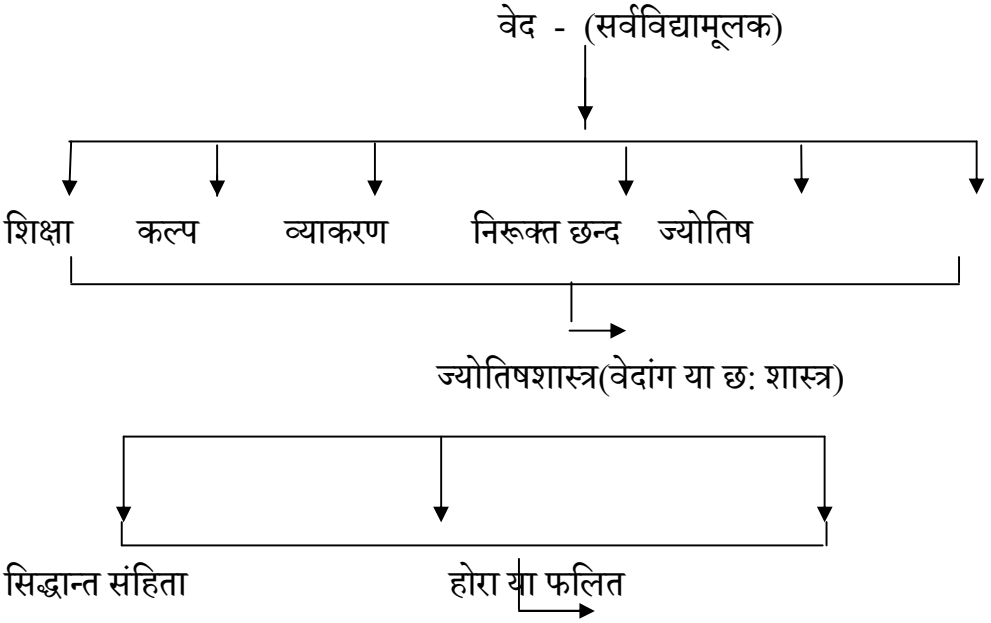

ज्योतिष के प्रमुख तीन स्कन्ध

वर्तमान ज्योतिषशास्त्र का जो स्वरूप हमें देखने को मिलता है, उसका श्रेय महात्मा लगध को जाता है। उन्होंने ही 'वेदांग ज्योतिष' की रचना करने ज्योतिष को स्वतन्त्र रूप से प्रतिपादित किया। यद्यपि ज्योतिष आज भी वहीं है, जो पूर्व में था, केवल काल भेद के कारण इसके स्वरूपों में भिन्नता दृष्टिगोचर होती है। भगवान सूर्य के अंशावतार ने भी सूर्यसिद्धान्त में यही कहा है कि –

शास्त्रमाद्यं तदेवेदं यत्पूर्वं प्राह भास्कर:।

युगानां परिवर्तेन कालभेदोऽत्र केवल:।।

ज्योतिषशास्त्र का संक्षिप्त इतिहास

ज्योतिषशास्त्र का इतिहास ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के साथ ही प्रारम्भ होता है तथा ब्रह्माण्ड की स्थिति पर्यन्त अविच्छिन्न रूप से गतिमान रहता है। अनन्त आकाश में विद्यमान अनन्त ज्योतिषपिण्डों का ज्ञान अभी तक मनुष्य नहीं कर पाया है। मनुष्य की अपनी सीमा है आकाश नि:सीम है फिर भी मनुष्य ने अन्तरिक्ष के अनेक रहस्यों को सुलझाने में सफलता प्राप्त की है तथा आगे भी सतत् प्रयत्नशील है। ब्रह्माण्ड अथवा अन्तरिक्ष से जुड़े हुये अनेक ऐसे प्रश्न है जो निश्चयात्मक रूप से आज तक नहीं सुलझ सके है । भगवान भास्कर ने स्वयं ही अनेक रहस्यों का उद्घाटन करते हुये ज्योतिषशास्त्र सम्बन्धी अनेक शंकाओं का समाधान किया है तथा ज्योतिषशास्त्र सम्बन्धी अत्यन्त गूढ़ ज्ञान दिया है। भारतीय प्राचीन विज्ञानों में अन्य विज्ञानापेक्षया ज्योतिष अत्यन्त प्राचीन विज्ञान है। वैदिककाल से ही इस शास्त्र का महत्व व उपयोगिता की अनुभूति हम करते आ रहे हैं। गणित, अन्तरिक्ष, भूगर्भ, कृषि, वृष्टियादि विभिन्न विज्ञानों का सर्वप्रथम प्रायोगिक तौर पर विवेचन ज्योतिषशास्त्र द्वारा किये जाने के कारण विश्व में इस शास्त्र की प्रतिष्ठा स्थापित है।

शास्त्रीयदृष्टया ज्योतिषशास्त्र की उत्पत्ति ब्रह्मा के द्वारा कही गई है। मतान्तर से यह भी माना जाता है कि प्रथमपुरूष हिरण्यगर्भ से ब्रह्मा ने ज्योतिषशास्त्र का ज्ञान लेकर नारद को प्रदान किया था। ऐतिहासिक दृष्टि से ऋग्वेद के काल से ज्योतिषशास्त्र की उत्पत्ति मानी गई है। यद्यपि इस कालखण्ड में ज्योतिषशास्त्र का कोई भी स्वतन्त्रग्रन्थ उपलब्ध नहीं होता हैं, परन्तु ज्योतिष शास्त्र के अनेक विषय वेदों के मन्त्र भाग एवं संहिता भाग से ग्रहण किये गये हैं। 'ओरायन' नामकग्रन्थ में लोकमान्य बालगंगाधर तिलक महोदय ने ऋग्वेद का काल ई0 पू0 4500 माना है, जबकि 'वैदिकसम्पत्ति' नामक ग्रन्थ में पं. रघुनन्दनशर्मा ने ऋग्वेद का रचना काल न्यूनातिन्यून 22,000 ई0पू0 माना है। इसी प्रकार ज्योतिषशास्त्र का कालखण्ड भी इसी वेद के समान होगा।

वस्तुत: ऋग्वेद का कालखण्ड निर्धारण करना सर्वथा दुष्कर है, परन्तु यह भी सत्य है कि सृष्टि की आदि से मानवजाति का मार्गदर्शक वेद ही था। इसी प्रकार विभिन्न इतिहासकार एवं प्राचीन साहित्य के रचयिता भी यह कहते हैं कि ज्योतिषशास्त्र की उत्पत्ति सृष्टि के आरम्भ काल से ही हुआ हैं। उस काल में मानव वन के जीव–जन्तुओं के साथ ही वन में रहते थे। मानव जीव- जन्तुओं के साथ सूर्योदय एवं सूर्यास्त की स्थिति को देखकर उसे समझने का प्रयास करता रहा होगा। कालान्तर में शनै: शनै: ज्योतिषशास्त्र का व्यवहार दैनिक जीवन में भी अपरिहार्य रूप से हुआ। आचार्य कमलाकर भट्ट ने स्वग्रन्थ सिद्धान्ततत्वविवेक में ज्योतिषशास्त्र के ज्ञानोपदेश का उल्लेख इस प्रकार किया है –

सर्वप्रथम ब्रह्मा से ज्योतिषशास्त्र के ज्ञान की उत्पत्ति हुई तत्पश्चात् ब्रह्मा के द्वारा नारद को ज्योतिष का ज्ञान प्रदान की गयी। इसी प्रकार क्रमश: चन्द्रमा ने शौनकादि ऋषियों को, नारायण ने वशिष्ठ एवं रोमक को, वशिष्ठ ने माण्डव्य को तथा सूर्य ने मय को ज्योतिषशास्त्र का ज्ञानोपदेश दिया था। इसका मूल श्लोक ग्रन्थ में इस प्रकार निरूपित है –

ब्रह्मा प्राह च नारदाय, हिमगुर्यच्छौनकायामलं
माण्डव्याय वशिष्ठसंज्ञकमुनि: सूर्यो मयायाह यत्।

आचार्य कश्यप के अनुसार ज्योतिषशास्त्र के अष्टादश प्रवर्त्तकों का उल्लेख इस प्रकार है –

सूर्य: पितामहो व्यासो वशिष्ठोऽत्रि पराशर:।
कश्यपो नारदो गर्गो मरीचिर्मुनिरंगिरा:।।
लोमश: पौलिशश्चैव च्यवनो यवनो भृगु:।
शौनकोष्टादशश्चैते ज्योति: शास्त्रप्रवर्त्तका:।।

सूर्य, पितामह,वेदव्यास,वशिष्ठ, अत्रि, पराशर, कश्यप, नारद, गर्ग, मरीचि,मनु,अंगिरा,लोमश, पौलिश,च्यवन, यवन, भृगु तथा शौनकादि अष्टादश महर्षियों को ज्योतिषशास्त्र का प्रवर्त्तक कहा गया है। ज्योतिष शास्त्र को इन्हीं आचार्यों ने अभिवृद्ध किया है और इसे चिन्तन के शिखर पर पहुँचाया है। विगत न्यूनतम दश हजार वर्षों से इन्हीं ऋषियों एवं आचार्यों के माध्यम से यह शास्त्र विकास की सीमाओं को छूता रहा है। इन आचार्यों ने अपनी अतीन्द्रिय शक्ति के बल पर इस शास्त्र को अप्रतिम ऊँचाई दी हैं। इन्हीं आचार्यों में से एक वर्ग जो अनुसन्धान, गणित एवं खगोलीय परिकल्पनाओं में डूबा रहा वह ज्योतिष का उद्देश्य काल गणना मानता है। वस्तुत: वेदों में ज्योतिष की उपस्थिति इष्टि, दर्श, पौर्णमास, पक्ष, मास, अयन, ऋतु आदि विषयों के स्पष्टार्थ ही रही। अत: इन्हीं विषयों को ज्योतिष शास्त्र के प्रयोजन में मुख्य और आद्य मानना युक्ति युक्त होगा।

ज्योतिषशास्त्र भारतीय विद्या का महत्वपूर्ण अंग है, विशेषकर इसलिए कि एकओर तो आचार्यों ने इसे पराविद्या की कोटि में ला दिया और और दूसरी ओर इसकाप्रवेश सर्वसाधारण के जीवन में इस सीमा तक व्याप्त होगा कि शुभ घड़ी, लग्नऔर मुहूर्त-शोधन दैनन्दिन जीवन के अंग बन गये। पंचांग के तत्त्वों काज्ञान चाहे सर्वसाधारण को भी न हो किन्तु ज्योतिषियों द्वारा नियोजितअनेकों पंचांग उत्तर में और दक्षिण में अपनी-अपनी पद्धिति के अनुसारप्रचलित हैं, मान्य हैं। राशि-फल का तो वैज्ञानिक कहे जानेवाला आज के युगमें इतनी व्यापकता से प्रसार हो गया है कि अनेक 'बौद्धिक' व्यक्ति भी पत्र-पत्रिकाओं के 'भविष्य-फल' वाले अंशको खुलेतौर पर, और कुछ लोग प्रच्छन्न रूप से देख लेते हैं। विशिष्ट धातु-निर्मितऔर नगीनों-जड़ी मुद्रिकाओं के प्रभाव को कुछ लोग भी कभी-कभी मानते देखेगये हैं।

यद्यपि विषयदृष्ट्यानुशीलन के आधार पर ज्योतिषशास्त्र के अनेक भेद हो सकते हैं, परन्तु मुख्य रूप से इसके तीन स्कन्ध प्रतिपादित हैं - सिद्धान्त, संहिता एवं होरा। आचार्य नारद ने भी कहा है कि –

सिद्धान्तसंहिताहोरारूपं स्कन्धत्रयात्मकम्।

वेदस्य निर्मलं चक्षुर्ज्योति: शास्त्रमनुत्तमम्॥

आचार्य वराहमिहिर ने स्वग्रन्थ वृहत्संहिता में स्कन्धत्रय का उल्लेख करते हुये लिखा है – **''ज्योतिश्शास्त्रमनेकभेदविषयं स्कन्ध त्रयाधिष्ठितम्''।** कुछ अन्य आचार्यों के मत में उक्त तीनों सिद्धान्तों के अतिरिक्त केरलि एवं शकुन को भी ज्योतिष के स्कन्धों में स्थान दिये गये है। उनके मतानुसार ज्योतिष के पंचस्कन्ध है। यथा –

पंचस्कन्धमिदं शास्त्रं होरागणितसंहिता।

केरलि: शकुनञ्चेति ज्योतिषशास्त्रमुदीरितम्॥

परन्तु यह मत सर्वस्वीकृत नहीं है। वस्तुत: शकुन – केरलीय – प्रश्न - मुहूर्त्त – अंगविद्या- स्वर – वास्तु - ताजिक – रमल इत्यादि विषय संहिता स्कन्ध के अन्तर्गत ही आते हैं। अन्यथा यदि प्रत्येक का अलग – अलग स्कन्ध माना जायेगा तो अनेक स्कन्ध हो सकते हैं। अत: ज्योतिषशास्त्र के मुख्यत: तीन ही स्कन्ध होते हैं।

1. **सिद्धान्त** - ज्योतिषशास्त्र के जिस स्कन्ध में त्रुटि से लेकर प्रलय काल पर्यन्त की गई काल गणना, मानव – दैव – जैव – पैत्र – नाक्षत्र – सौर – सावन – चान्द्र तथा ब्राह्मादि नवविध काल मानों का सांगोपांग कथन, ग्रहों के मध्य- मन्दस्फुटगति - स्थित्यादि का निरूपण, व्यक्ताव्यक्त गणित, त्रिकोणमितिय गणितोपपादन, तत्सम्बन्धी प्रश्नों का सोत्तर संकलन, वेधोपयुक्त यन्त्रादि विषयों का

निरूपण हो उसे 'सिद्धान्त' कहते है। इसेश्लोकबद्ध रूप में आचार्य भास्कराचार्य जी ने स्वग्रन्थ 'सिद्धान्तशिरोमणि' में इस प्रकार

प्रतिपादित किया है –

त्रुट्यादिप्रलयान्तकालकलना मानप्रभेद: क्रमा
च्चारश्च द्युसदां द्विधा च गणितं प्रश्नास्तथासोत्तरा:।
भूधिष्ण्यग्रहसंस्थितेश्च कथनं यन्त्रादि यत्रोच्यते
सिद्धान्त: स उदाहृतोऽत्र गणितस्कन्धप्रबन्धे बुधै:।।

2. **संहिता** - ज्योतिषशास्त्र के जिस स्कन्ध में ग्रहचारवश ग्रह- नक्षत्रादि बिम्बों के शुभाशुभ लक्षण से पशु – पक्षी- कीटादियों का भूसापेक्ष सामूहिक विवेचन तथा प्राकृतिक – आकाशीय घटनाओं का ज्ञान किया जाता हो, उसे 'संहिता शास्त्र' कहते हैं। वृहत्संहिता में वराहमिहिर का कथन है - ''**तत्कात्सन्र्योपनयस्य नाममुनिभि: संकीर्त्यते संहिता**''।
3. **होरा**– जिस स्कन्ध में मानव मात्र का उसके जन्म सम्बन्धित काल के आधार पर ग्रहों एवं नक्षत्रों की स्थिति वशात् उसके जीवन सम्बन्धित शुभाशुभ फलों का विवेचन किया जाता है, उसे 'होरा' कहते हैं।

ज्योतिष की उपयोगिता -

ज्योतिषशास्त्र मानव जीवन के लिए प्रत्येक क्षेत्र में सहयोगी एवं कल्याणकारी है। यह मानव के जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त उसके साथ प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से जुड़ा हुआ है। विश्व के समस्त कार्य कालाधीन है। ज्योतिषशास्त्र कालनियामक होने के कारण सर्वप्रथम काल निर्धारण में मानव मात्र के लिये सहायक व उपयोगी है। मानव जीवन में कर्म सिद्धान्त अत्यन्त महत्वपूर्ण है । कर्म का विवेचन करते हुए कर्मविपाकसंहिता कहती है –

कर्मणा नरकं सूत स्वर्गं याति च कर्मणा।
देवत्वं प्राप्नुयाज् जीवो राक्षसत्वं च कर्मणा।।
कर्मणा बन्धमायाति मोक्षमायाति कर्मणा।
कर्मणा पतनोच्छ्रायौ नृणां जन्मनि – जन्मनि।।

इन सिद्धान्तों से यह स्पष्ट हो जाता है कि मनुष्य अपने कर्मों के अधीन अपने भविष्य का निर्माण करता है। जब हम शरीर के केवल सुख और दु:ख का विचार करते हैं तो सर्वप्रथम मनुष्य की आयु तथा स्वास्थ्य का प्रश्न सामने आता है। पंचस्वरा: नामक ग्रन्थ में लिखा भी है –

''पूर्वमायु: परीक्ष्येत ततो लक्षणमादिशेत् ।।''

अर्थात् जब मनुष्य का जीवन रहेगा तभी वह अपने शारीरिक सुखों एवं दु:खों का उपयोग करेगा। 'शरीरं व्याधिमन्दिरम्' यह उक्ति स्पष्ट दर्शाती है कि व्याधियों का स्थान शरीर ही है। व्याधियाँ शरीर नष्ट होने के बाद भी जीव का साथ नहीं छोड़ती है। ये अन्य जन्मों में भी शारीरिक कष्ट देती रहती है। इसलिए आचार्यों ने कहा है–''कर्मजा व्याधय:केचित्दोषजा: सन्ति चापरे'' अर्थात् कुछ व्याधियाँ कर्मों के कारण होती हैं तथा कुछ वात, पित्त, कफ आदि दोषों के कारण होती हैं। इसी प्रकार शरीर में प्रमुख रूप से तीन प्रकार की व्याधियॉ होती हैं– साध्य, असाध्य एवं याप्य। प्रत्येक क्षेत्र का उल्लेख तो प्रस्तुत इकाई में करना सम्भव नहीं होगा, किन्तु मुख्य रूप से मानव जीवन में व्यावहारिक दृष्टिकोण से निम्नलिखित क्षेत्र में ज्योतिषशास्त्र की उपयोगिता परिलक्षित होती है –

1. गर्भ निर्धारण में
2. आयु निर्धारण में
3. नामकरण, विद्यारम्भ, व्रतबन्ध, चूड़ाकर्म आदि समस्त संस्कारों में
4. विवाह, सन्तानोत्पत्ति आदि में
5. आजीविका में
6. चिकित्सा में
7. यात्रा में
8. गृहनिर्माण / गृहप्रवेश में
9. वास्तु सम्बन्धी विचारों में
10. शिक्षा में
11. पर्यावरण, कृषि, प्राकृतिक - आपदा, वैश्विक स्थिति, समर्घ – महर्घ, वृष्टि, शकुन आदि विचारों में ।
12. सामुद्रिक विचार में

इस प्रकार यदि देखा जाए तो मानव जीवन से जुड़े प्रत्येक क्षेत्रों में ज्योतिष शास्त्र किसी न किसी रूप में उससे सम्बन्ध रखता ही है, इसमें संशय नहीं हैं।अत: इस शास्त्र का अध्ययन मानव मात्र के उपयोगी एवं कल्याणकारी होगा।

This work by Dr. Nandan Kumar Tiwari licensed under a Creative Commons Attribution-ShareAlike 4.0 International License.